त्रिपुटी से होने वाले (करण-सापेक्ष) ज्ञान में सजातीयता का होना आवश्यक है। अतः 'नहीं' के द्वारा 'नहीं' को ही देखा जा सकता है, 'है' को नहीं। 'है' का ज्ञान त्रिपुटी से रहित (करण-निरपेक्ष) है। ..जो 'है' से प्रकाशित होता है, वह ('नहीं') 'है' को कैसे प्रकाशित कर सकता है? अपने-आपमें स्थित तत्व- ('है'-) का अनुभव अपने-आप- ('है'-) से ही हो सकता है, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि आदि- ('नहीं'-) से बिल्कुल नहीं। ..यह परमात्मतत्व न तो प्रवचन से, न बुद्धि से और न बहुत सुनने से प्राप्त हो सकता है। - 15 / 11 / 988

तात्पर्य यह है कि इन्द्रिय और बुद्धि जन्य ज्ञान करण-सापेक्ष और अल्प होता है। अल्प ज्ञान ही 'अज्ञान' कहलाता है। इसके विपरीत 'स्वयं' का ज्ञान किसी करण- (इन्द्रिय, बुद्धि आदि-) की अपेक्षा नहीं रखता और वह सदा पूर्ण होता है। - 15 / 15 / 996

"अनुभव के लिए शरीर, इन्द्रिय, प्राण, मन, बुद्धि आदि के सहयोग की अपेक्षा नहीं है। प्रतीति करण-सापेक्ष है, पर अनुभव करण-निरपेक्ष है।"
– शरणानन्दजी, मूक सत्संग (1963), पृष्ठ 182

All the Philosophies of the world on one side and Sharnanandji's Philosophy on one side.

-Dr. Satinder Dhiman

(Ph.D, Ed.D. – U.S.A.)

For 100% Pure KARAN-NIRPEKSH Books refer swamisharnanandji.org

दुलीचंदजी 79888 86115 करनाल मानव सेवा संघ प्रेममूर्तिजी 94164 67999

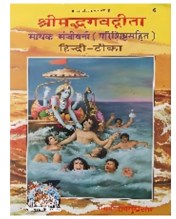

रामसुखदासजी की साधक-संजीवनी ने शरणानन्दजी की करण-निरपेक्ष शैली की सर्वोपरिता सिद्ध कर दी है।

[गीतप्रेस से अनेकों भाषा में 1985 से अब तक अंदाजीत 20 लाख से ज्यादा कल्याणकारी साधक-संजीवनी छप चुकी है। साधक-संजीवनी-कोश सहित पृष्ठ 1296 की latest साधक-संजीवनी से यह reference लिया गया है।]

कर्मयोग में 'कर्म' करण-सापेक्ष है और 'योग' करण-निरपेक्ष है।
- साधक-संजीवनी, नम्र निवेदन, पृष्ठ 'ङ'

परमात्मतत्व की प्राप्ति करण-सापेक्ष शैली से चलने पर देरी से होती है और करण-निरपेक्ष शैली से चलने पर शीघ्रता से तत्काल होती है। करण-सापेक्ष शैली में जड़ता (शरीर-इन्द्रियाँ-मन-बुद्धि) का आश्रय लेना पड़ता है। करण-सापेक्ष शैली से जिन सिद्धियों की प्राप्ति होती है, वे तो परमात्मतत्व की प्राप्ति में विघ्न हैं.. अनिष्ट (पतन) होने की सम्भावना है। गीता में करण-सापेक्ष शैली का भी वर्णन है.. "साधक-संजीवनी" में करण-निरपेक्ष शैली को ही मुख्यता दी गयी है। गीतोक्त कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग - तीनों ही साधन करण-निरपेक्ष अर्थात स्वयं से होने वाले हैं।
- साधक-संजीवनी, प्राक्कथन, साधन की दो शैलियाँ, पृष्ठ 'द' से 'प'

स्वयं के ज्ञान में त्रिपुटी नहीं होती है। स्वयं का ज्ञान तो स्वयं के द्वारा ही होता है अर्थात वह ज्ञान करण-निरपेक्ष है। श्रवण, मनन आदि साधन तत्व के ज्ञान में परम्परागत साधन माने जा सकते हैं, पर वास्तविक बोध करण-निरपेक्ष(अपने- आपसे) ही होता है।
- साधक-संजीवनी, अध्याय 2, श्लोक 29, पृष्ठ 106-107

द्रव्यमय यज्ञ में क्रिया तथा पदार्थ की मुख्यता है; अतः वह करण-सापेक्ष है। ज्ञानयज्ञ में विवेक-विचार की मुख्यता है; अतः वह करण-निरपेक्ष है। इसलिये द्रव्यमय यज्ञ से ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठ है।
- साधक-संजीवनी, अध्याय 4, श्लोक 33, पृष्ठ 338

वास्तविक बोध करण-निरपेक्ष है अर्थात मन, वाणी आदि से परे है। उसका वर्णन भी कोई कर नहीं सकता। वास्तविक बोध स्वयं के द्वारा ही स्वयं को होता है। - 4 / 35 / 340

परमात्मतत्व का ज्ञान करण-निरपेक्ष है। इसलिये उसका अनुभव अपने-आपसे ही हो सकता है, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि आदि करणों से नहीं। मन बुद्धि आदि सब जड़ हैं। .. वास्तव में तत्व का अनुभव जड़ के सम्बन्ध विच्छेद से होता है। - 4 / 38 / 345

स्वरूप का ज्ञान स्वयं के द्वारा ही स्वयं को होता है। इसमें ज्ञाता और ज्ञेय का भाव नहीं रहता। यह ज्ञान करण-निरपेक्ष होता है अर्थात इसमें शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि आदि किसी करण की अपेक्षा नहीं होती। - 5 / 20 / 394

कर्मयोग, ज्ञानयोग, और भक्तियोग तो करण-निरपेक्ष साधन हैं, पर ध्यानयोग करण-सापेक्ष साधन है। - 6 / 10 / 432

ध्यानयोग तो करण-सापेक्ष है, पर कर्मयोग करण-निरपेक्ष साधन है। करण-सापेक्ष साधन में जड़ता से सम्बन्ध विच्छेद देरी से होता है और इसमें योगभ्रष्ट होनेकी सम्भावना रहती है। - 6 / 20 / 445

करण-सापेक्ष साधन में मन को साथ लेकर स्वरूप में स्थिति होती है। ..करण को अपना मानने से ही करण-सापेक्ष साधन होता है। ध्यानयोगी मन (करण) को अपना मानकर उसको परमात्मा में लगाता है। मन लगाने से ही वह योगभ्रष्ट होता है। अतः योगभ्रष्ट होने में करण-सापेक्षता कारण है। - 6 / 37 / 472

भक्त भगवत्कृपा से कर्मयोग और ज्ञानयोग-दोनों को ही जान लेता है। ..वे ब्रह्म को भी जान लेते हैं और समग्ररूप को भी जान लेते हैं। .. ऐसे युक्तचेता भक्त अन्तकाल में कुछ भी चिन्तन होने पर भी योगभ्रष्ट नहीं होते, प्रत्युत भगवान को ही प्राप्त होते हैं। करण-सापेक्ष साधन में मनुष्य योगभ्रष्ट होता है। - 7 / 30 / 575

अपने आपको अपने स्वरूप का जो ज्ञान जीव को होता है, वह सर्वथा करण-निरपेक्ष होता है, करण-सापेक्ष नहीं। इसलिए इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि आदिसे अपने स्वरूप को नहीं जान सकते। आप स्वयं ही अपने-आप से अपने-आप को जानते है। - 10 / 15 / 715

इन्द्रियाँ केवल अपने-अपने विषयों को ही पकड़ सकती हैं, परमात्मतत्व को नहीं पकड़ सकतीं; क्योंकि परमात्मतत्व इन्द्रियों (करण-सापेक्ष) का विषय नहीं है। परमात्मतत्व स्वयं का विषय है। स्वयं को स्वयं से ही जान सकते हैं, उसका ज्ञान स्वयं (करण निरपेक्ष) से ही होता है। - 10 / 19 / 719

परमात्मा को स्वयं- (करण-निरपेक्ष ज्ञान-) से ही जाना जा सकता है; प्रकृत्ति के कार्य मन-बुद्धि आदि (करण-सापेक्ष ज्ञान) से नहीं। - 12 / 3, 4 / 810

अभ्यास, शास्त्रज्ञान और ध्यान-ये तीनों तो करण-सापेक्ष हैं, पर कर्मफल त्याग करण-निरपेक्ष है। - 12 / 12 / 836

परमात्मतत्व में सत-असत शब्दों की अर्थात वाणी की प्रवृत्ति होती ही नहीं-ऐसा वह करण-निरपेक्ष तत्व है। ..वह प्रकृत्ति की पकड़ में नहीं आता। परन्तु वह स्वयं से प्राप्त किया जा सकता है। ..तत्व निरपेक्ष और प्रकृति से अतीत है। - 13 / 12 / 882-883

ध्यानयोगी, सांख्ययोगी, कर्मयोगी "अपने-आपसे अपने-आपमें परमात्मतत्व अनुभव कर लेता है।" अपने में परमात्मा को देखना करण-निरपेक्ष होता है। करण-सापेक्ष ज्ञान प्रकृति के सम्बन्ध से होता है। इसलिये साधक किसी करण के द्वारा परमात्मा में स्थित नहीं होता, प्रत्युत स्वयं ही स्थित होता है। स्वयं की परमात्मा में स्थिति किसी करण के द्वारा हो ही नहीं सकती। - 13 / 24 / 899-900